IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

वैश्णव धर्म में कृष्ण चरित्र एवं उनके लीला स्थलों का ऐतिहासिक अध्ययन

विवेक कुमार
शोध छात्र इतिहास
एलएनएमयू, दरभंगा
रानी, बछवाड़ा, बेगूसराय

कृष्ण चरित्र का प्रथम व्यापक चित्रण महाभारत में हुआ है । महाभारत के कृष्ण पाण्डवों के मित्र और एक नीति कुशल नरेश हैं । वे युद्ध से विरत होते अर्जुन का मोह भंग करते तथा उसे कर्त्तव्य का उपदेश देते हैं । महाभारत के कुछ अंशों में कृष्ण विष्णु के अवतार के रूप में भी चित्रित हैं, पर इन अंशों की प्राचीनता के संबंध में विद्वानों को संदेह है ।

भारत धर्म प्रधान देश है । श्रीराम एवं श्रीकृष्ण इसके स्पंदन हैं । श्रीराम मर्यादापुरुषोत्तम राम हैं तो श्रीकृष्ण लीलापुरुषोत्तम । भारतीय ऐतिहासिक साहित्यिक साक्ष्यों में श्रीकृष्ण शौर्य, ज्ञान, सौन्दर्य, प्रेम एवं आनन्द के पर्याय माने जाते हैं ।

महाभारत में श्रीकृष्ण की अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका है । पद–पद पर श्रीकृष्ण की नीतिज्ञता, सर्वशक्ति सम्पन्नता एवं भगवत के अद्‌भुत समन्वय के दर्शन होते हैं । वे ब्रह्मा एवं विष्णु के अवतार माने गये हैं । महाभारत के सभा पर्व में श्रीकृष्ण वेदों के पंडित, राजनीति में पारंगत, पराक्रमी एवं अजेय योद्धा के रूप में आते हैं । उद्योग पर्व में उनके पराक्रम से संबंध अनेक शौर्यपूर्ण कार्यों का वर्णन है, वे इन्द्र से भी अधिक पराक्रमी हैं । युद्ध में एकाकी श्रीकृष्ण को प्राप्त कर अर्जुन को विजयश्री प्राप्त करने में पूर्ण विश्वास है ।

महाभारत में श्रीकृष्ण के देवत्व एवं ऐश्वर्य का विस्तार के साथ विवरण है, उनके जीवन के मधुर भाव से सम्बद्ध पक्ष का वहाँ उल्लेख नहीं है । सभा पर्व में श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का संकेत मात्र है, किन्तु महाभारत के परिशिष्ट हरिवंश में विस्तृत विवरण अवश्य प्राप्त होता है ।

श्रीकृष्ण भीष्म पितामह के शब्दों में पूज्यतम व्यक्तित्व हैं । महाभारत में श्रीकृष्ण के अलौकिक चरित्र से उनकी लोकोत्तरता प्रकट होती है । दुर्योध्न की सभा में तथा महाभारत–युद्ध में उनका विश्वरूप–दर्शन उनके अलौकिक चरित्र एवं ईश्वरत्व का उद्‌घाटन करता है ।

नारायणं नमस्कृत नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ।।

–यह महाभारत बीज मंत्र है, जो मंगलाचरण के रूप में प्रायः प्रत्येक पर्व के प्रारम्भ में है । इसका तात्पर्य है कि श्रीकृष्ण नारायण, अर्जुन नर तथा सरस्वती जो क्रमशः परमात्मा, जीव एवं ब्रह्मविद्या के प्रतीक हैं । इनका स्मरण कर इस ग्रंथ का पारायण करना चाहिये । महाभारत के अनुसार जहाँ धर्म है, वहाँ श्रीकृष्ण हैं और जहाँ श्रीकृष्ण हैं, वहाँ विजय है–

यतो धर्मस्ततः कृष्णस्ततो जयः ।।

गीता में धर्म संस्थापन एवं दुष्कृतों के नाश के लिए श्रीकृष्ण का अवतार वख्णत है । सम्पूर्ण महाभारत के ताने–बाने में वासुदेव श्रीकृष्ण की महिमा का सूत्र महाभारत का आधर है । गीता में श्रीकृष्ण ने अत्यंत गुह्य ज्ञान का उपदेश दिया है । गीता में ज्ञान, भक्ति, कर्म का अद्‌भुत समन्वय है । गीता योगी एवं गृहस्थ सभी के लिए समान रूप से उपयोगी है । यह सम्पूर्ण उपनिषदों का सार है । गीता में ज्ञान, कर्म, भक्ति रूप सभी धर्मों की फलाशा का त्याग कर निष्काम कर्म करते हुए भगवत्–शरण में आने का उपदेश है–

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

यहाँ श्रीकृष्ण का परम ज्ञानी योगेश्वर स्वरूप प्रकट होता है ।

पुराणों में अनेक कथाओं के माध्यम से श्रीकृष्ण के महत्त्व का प्रतिपादन हुआ है । गोवर्धनधरण– कथा में इन्द्र द्वारा उनका अभिषेक एवं उपेन्द्र नामकरण श्रीकृष्ण के गौरव एवं उनकी महिमा को प्रकट करते हैं । विष्णु, पद्‌म, ब्रह्मवैवर्त एवं श्रीमद्‌भागवत आदि पुराणों में उनकी गोपाल कृष्ण रूप की मधुर कथाओं का विस्तार मिलता है ।

श्रीमद्‌भागवत महापुराण श्रीकृष्ण के मधुरतम प्रेम–रस का उद्वेलित समुद्र है । श्रीकृष्ण लीलापुरुषोत्तम हैं । भागवत में श्रीकृष्ण के प्रेम एवं सौन्दर्य के मनमोहक चित्र उभरे हैं । श्रीकृष्ण ने गोपाल नाम को सार्थक बनाकर गो–सेवा के महत्त्व को प्रतिपादित किया है–

गावो मे ह्रदये सन्तु गवां मध्ये वासम्यहम् ।।

श्रीकृष्ण का गोचारण में, गोप एवं गायों से अत्यंत प्रेम है । शरीर एवं मस्तिष्क के विकास के लिए गोरस सवोत्तम पोषक आहार है । गो–सम्पदा सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक राष्ट्रीय अर्थव्यस्था की केन्द्र रही है ।

श्रीकृष्ण की गोरस एवं दान–लीला का रहस्य यह है कि गाय का दूध, दही, घृत आदि बहुत उपयोगी तथा पालन–पोषण करनेवाला है । गोवर्धन पूजा में गोवर्धन प्राकृतिक वन समपदा का प्रतीक है, अतः वन सम्पत्ति, वृक्ष, गोधन, गोपों कृषकों का संरक्षण आज भी महत्त्वपूर्ण है ।

श्रीभागवत में श्रीकृष्ण की रासलीला योगेश्वर की दिव्य लीला कही गयी है । जदग्‌गुरु श्रीवल्लभाचार्य, श्रीधरस्वामी एवं जीवगोस्वामी आदि आचार्यों एवं संतों ने इस दिव्य लीला को लौकिक न मानकर काम पर अलौकिक प्रेम की विजय माना है । महारास के समय श्रीकृष्ण की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी । कृष्ण आत्मा हैं, राध आत्माकार वृत्ति हैं और गोपियाँ आत्माभिमुखी वृत्तियाँ हैं । इनका धाराप्रवाह रूप में निरंतर आत्मरमण ही रास है । अंतरात्मा के मध्य से जीवात्मा का मायाजनित अभिमान के हरण का प्रयास ही चीरहरण है ।

भागवत में श्रीकृष्ण की सर्वाधिक प्रिय गोपी का वर्णन है, जो पूर्व जन्म से कृष्णाराधना में मग्न है । यही गोपी कृष्ण–प्रिया राधा के रूप में कृष्ण–काव्यों में वर्णित है ।

श्रीकृष्ण के ब्रह्मत्व को आधार माननेवाले भारतीय दर्शन के क्षेत्र में चार प्रमुख आचार्य हैं– मधवाचार्य, विष्णुस्वामी, निम्बार्काचार्य एवं वल्लभाचार्य । द्वैतसिद्धांत के प्रवर्तक श्रीमधवाचार्य जी के अनुसार श्रीकृष्ण विष्णु के रूप में अविनाशी ब्रह्म हैं । भक्ति द्वारा ही ब्रह्म प्राप्ति संभव है । आचार्य विष्णुस्वामी ने अद्वैतवाद का प्रवर्तन किया । उनके अनुसार श्रीकृष्ण की आहलादिनी शक्ति राधा का प्रमुख स्थान है ।

श्रीकृष्ण भक्ति के तीसरे आचार्य श्रीनिम्बार्क हैं । उन्होंने श्रीकृष्ण के साथ राधा की महत्ता स्वीकार की है और मधुर भक्ति को प्रधानता दी है । द्वैताद्वैत के प्रवर्तक श्रीनिम्बार्क जी ने राधा–कृष्ण के प्रेम को आत्मा–परमात्मा के प्रेम रूप में चित्रित किया है ।

श्रीकृष्ण भक्ति के चौथे महत्त्वपूर्ण आचार्य हैं श्रीवल्लभाचार्य । वे श्रीष्णिुस्वामी के अनुयायी हैं । उनके अनुसार श्रीकृष्ण परम ब्रह्म हैं, राधा उनकी शक्ति हैं । ब्रह्म अपनी लीलाओं से सृष्टि का विस्तार करता है । जीव और ब्रह्म का संबंध सेवक–स्वामी का है । प्रभु–कृपा से भक्ति द्वारा जीव ब्रह्म को प्राप्त होता है । इस अनुग्रह को वल्लाभाचार्य ने पुष्टि कहा है । यह पुष्टि मार्ग एवं वल्लाभ–सिद्धांत हिन्दी कृष्ण–काव्य का दार्शनिक आधार माना गया है ।

संस्कृत महाकवि जयदेव के गीत गोविनद काव्य में राधा–कृष्ण के जिस उत्कृष्ट प्रेम का वर्णन है, उसके मूल में धार्मिक भावना है– सरस मन से हरि स्मरण है ।

उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन के साथ श्रीकृष्ण को लेकर कृष्णभक्त कवियों ने हिन्दी में उत्कृष्ट साहित्य की रचना की । भक्त कवियों से लेकर रीतिकाल एवं आधुनिक युग तक श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व से जैसी शाश्वत प्रेम, सौन्दर्य एवं आनन्द की धारा प्रवाहित हुई है, वह आज भी सरस हृदयों को आप्लावित करने में समर्थ है । भगवान् श्रीकृष्ण के उदात्त चरित्र का प्रभाव हमारी संस्कृति एवं साहित्य पर भी पड़ा है तथा उसी से उनके लोकरंजक लीलामय रूप के साथ उनके ऐश्वर्य एवं ईश्वरत्व को प्रत्यक्ष अनुभूति होती है ।

लीला पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण की बाल–लीलाओं के लिए 'महावन' प्रसिद्ध है जहाँ वे गोचारण के लिए जाते थे । आजकल इस स्थान पर इस नाम का एक छोटा गाँव है जहाँ यात्री तीर्थ यात्रा के लिए जाते हैं । 'गोकुल' यादवों की दूसरी राजधानी थी जहाँ गोपाराज नंद का निवास था जो यमुना से छह मील और महावन से एक मील दूरी पर स्थित है । यहाँ आज इस नाम से एक नगर है । पौराणिक कथाओं तथा इतिहासों में वर्णित है कि मथुरा शूरसेन की राजधानी थी । मथुरा के आसपास का क्षेत्र एक अति प्राचीन काल में प्रसिद्ध शूरसेन का राज्य कहलाता था । मथुरा कुरुक्षेत्र और द्वारिका नामक नगरी की गणना उनके लीला स्थलों का ऐतिहासिक साक्ष्य प्रस्तुत कर रही है ।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार मथुरा पर पहले 'मधु' नामक असुर का राज्य था जिनके नाम पर यहाँ के जंगल का नाम 'मधुवन' पड़ा । वह शिव का बड़ा भक्त था । उसने 'मधुरा' नामक नगरी बसायी। मधु ने कुम्भीनसी नामक आर्य कन्या से विवाह किया, जिससे लवण नामक बहुत ही अत्याचारी पुत्र पैदा हुआ । इसे अयोध्या के सूर्यवंशी राजा मान्धता ने परास्त किया । सूर्यवंशी राम अश्वमेघ यज्ञ के समय शत्रुघ्न के पुत्र शूरसेन ने इसे असुरों से जीत लिया, जिसके नाम पर इस प्रदेश का नाम शूरसेन पड़ा । इसकी राजधानी का नाम 'मधुरा' से बदलकर 'मथुरा' हो गया । कुछ सदियों तक सूर्यवंशियों का यहाँ राज्य रहा लेकिन बाद में चन्द्रवंशी यादवों ने इस पर अपना अधिकार कर लिया । पुराग्रंथों में वर्णित मथुरा महाभारतकालीन अंधक–वृष्णि संघ की राजधानी थी । वर्तमान में यह उत्तर प्रदेश में यमुना नदी के तट पर स्थित है । जो प्राचीनकाल में कृष्ण चरित्र एवं उनके लीला स्थलों के ऐतिहासिक साक्ष्य प्रस्तुत कर रही है ।

पौराणिक कथाओं तथा इतिहास में वर्णित है कि कंस के अत्याचार से त्रस्त यादवों ने वृन्दावन में शरण ली । गोवर्धन नामक पहाड़ी थी जहाँ यादवों के लिए चारागाह था । भागवत महापुराण में इसके महात्म्य के संबंध में एक कथा है । यादवों में प्रथा थी कि वे प्रतिवर्ष गोवर्धन पर्वत पर वैदिक देवता इन्द्र की पूजा करते थे । एक वर्ष कृष्ण ने इन्द्र पूजा का विरोध करते हुए सबको सलाह दी कि गोवर्धन हमारे गोधन और जीवन का आधार है इसलिए इसकी पूजा महत्त्वपूर्ण है । यह पूजा तब से लेकर आज तक प्रचलित है । किन्तु कथानुसार इन्द्र ने अपने अपमान से अतिक्रोधित होकर मूसलधार वर्षा से जल–प्रलय का दृश्य उपस्थित कर दिया । चतुर्दिक त्राहि मच गयी । तब श्रीकृष्ण ने अपनी शक्ति प्रदर्शित करते हुए मात्र आठ वर्ष की अवस्था में ही गोवर्धन को एक अंगुली से छत्र की तरह धारण करते हुए ब्रजमंडल को जल–प्रलय से बचाया । तब से गोवर्धन एक प्रसिद्ध तीर्थस्थल बन गया । अंगुली पर उठाने की घटना काल्पनिक हो सकती है लेकिन यह सच्ची घटना है कि इन्द्रयाग के बदले उन्होंने गोवर्धन पूजा की प्रथा चलायी और तत्कालीन जन–जीवन को अतिवृष्टि से बचा लिया । गीता भी कहती है कि श्रीकृष्ण ने भौतिक यज्ञ–याग के प्रति उदासीनता प्रकट करते हुए इसके बदले अध्यात्म और लोक संग्रह को प्रमुखता दी है ।

महाभारतकालीन यदुवंशियों ने मथुरा को छोड़ने के पश्चात् द्वारिका को प्रमुख राजधानी बनाया पौराणिक कथाओं में वर्णित है कि वैवश्वत मनु–पुत्र शर्याति ने सौराष्ट्र, गुजरात प्रदेश बसाया था । शर्याति के पुत्र आनर्त के नाम पर इसका नाम आनर्त पड़ा । उसके पुत्र रेवत ने 'कुश स्थली' नामक नगरी बसायी । 'कुश स्थली' नगरी ही आगे चल कर द्वारिकापुरी के नाम से प्रसिद्ध हुई । महाभारतकालीन यहाँ के राजा रेवत की कन्या रेवती श्रीकृष्ण के भ्राता बलराम से ब्याही गई । पुत्रहीन रेवत अपना राज्य बलराम को देकर वन में तपस्या करने चले गये । इस प्रकार यह प्रदेश कृष्ण–बलराम के कब्जा में आ गया । मगध सम्राट् जरासंघ के आक्रमण से तंग आकर श्रीकृष्ण मथुरा छोड़कर यादवों को साथ लेकर द्वारिका आ गये । तब से उनके सम्पर्क के कारण द्वारिका तीर्थस्थली मोक्षदायिकापुरी बन गयी ।

आज से लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व पांडवों और कौरवों ने अपनी–अपनी सेनायें लेकर कुरुक्षेत्र में एकत्रित हुए । इसके मूल में उस ईर्ष्या का बीज था, जो वर्तमान काल तक भी राजपूतों, मराठों, सिखों यहाँ तक कि इजराइल–सीरिया, भारत–पाक, इराक–अमेरिका आदि के इतिहास में बराबर फलता हुआ नजर आता है । युधिष्ठिर अपने पाँच पांडव भाई, जो विभिन्न कलाओं में ऐसे निपुण थे कि उनकी ख्याति देखकर दुर्योधन ईर्ष्या की अग्नि में जलने लगे । यहाँ तक कि एक विशेष प्रकार के गृह बनवाकर उसमें उनकी माता कुंती समेत उन्हें

जला देने का प्रबंध किया गया, परन्तु इसकी सूचना पहले ही मिल गई थी, वे वहाँ से भाग निकले । इसी बीच वेश बदल कर पांडव द्रोपदी के स्वयंवर की कठिन कड़ी शर्त्त को पूरा किया । श्रीकृष्ण वहाँ मौजूद थे और वे पांडवों को हस्तिनापुर ले गए और कौरवों के साथ संधि करा दी । पांडवों ने आपना अलग राज्य 'इन्द्रप्रस्थ' बनाया । फिर भी कौरवों ने कपट किया, परिणामस्वरूप युद्ध ठन गया ।

दोनों ओर की सेनायें कुरुक्षेत्र में एकत्र हुई । श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी बने । कौरव सेना का सेनापति भीष्म एवं पांडव सेना का सेनापति अर्जुन था । अर्जुन का रथ दोनों ओर की सेनाओं के बीच में खड़ा हुआ, तब उसे दोनों ही तरफ बंधु–बांधव, गुरु और संबंधी नजर आए । फलतः वह मोह के समुद्र में डूब गये । भावावेश में उनकी आँखों से आँसू निकल पड़े । यह कह कर कि यह तो छोटा सा राज्य है । मैं तो तीनों लोकों के राज्य के लिए भी इसका वध नहीं करूगाँ । अर्जुन ने श्रीकृष्ण के सामने धनुष–वाण रख दिए ।

अब अर्जुन को युद्ध के लिए तैयार करना श्रीकृष्ण के सामने एक बड़ी समस्या थी । बस इसी समस्या के समाधन के हेतु श्रीकृष्ण के मुख से जो वाग्धरा प्रवाहित हुई वह 'भागवद्गीता' रूपी अमृत कलश मानी जाती है । उसका तात्कालिक हेतु चाहे अर्जुन के मोह–अंधकार को दूर करना ही था, परन्तु श्रीकृष्ण ने इसके रूप में मानव को जो प्रकाश–पूँज दिया, उसने इतिहास की इस दीर्यावधि में असंख्य हृदयों को सत्यप्रेरणा दी है ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कुरुक्षेत्र के रणभूमि में वर्णित भागवतगीता के संबंध में ऐतिहासिक साक्ष्य के रूप में इसके ज्ञान को भली–भाँति समझ लेने से मनुष्य में वह विवेक पैदा हो जाता है जिसके आधार पर वह धर्म और अधर्म को अच्छी तरह पहचान सकता है । श्रीकृष्ण का उपदेश सुनने के बाद अर्जुन ने कहा– ''आप की कृपा से मुझे सद्ज्ञान प्राप्त हो गया है । मेरा वह मोह दूर हो गया है । मेरे संशय छिन्न–भिन्न हो गए हैं । मैं वही करूँगा, जिसकी आप आज्ञा करेंगे ।''

भागवतगीता में श्रीकृष्ण ने तीन विभिन्न मार्गों से वह ज्ञान अर्जुन को देने की कोशिश की है, प्रथम भाग में पहले से छठे अध्याय के अंतर्गत कर्म, त्याग और ज्ञान पर बहुत गूढ़ विवाद है । दूसरे भाग में अध्याय सात से बारह के अंतर्गत इस संसार में जो दृष्टिगोचर है, बीज आत्मा मैं हूँ, यह मुझसे उत्पन्न होता है और मेरा ही सहारा पाता है । तीसरे भाग में अध्याय तेरह से अठारह के अंतर्गत किस प्रकार प्रकृति के गुण– तम, रज और सत्य– ब्रह्माण्ड के अंदर काम करते हैं और किस प्रकार यह समस्त वाह्य संसार एक ही शक्ति से उत्पन्न होता है ।

यह एक बड़ी रहस्यमय पहेली है कि किस प्रकार एक ही मनुष्य यह सब कुछ कह सकता है । इसका उत्तर तो साधारण है । एक ही मनुष्य किसी का पुत्र, किसी का पिता, किसी का गुरु, किसी का शिष्य– विभिन्न अवस्थाओं में विभिन्न नामों से पुकारा जाता है । इस प्रकार एक ही मनुष्य के कई पहलू होते हैं ।

आधुनिक संदर्भ में श्रीकृष्ण चरित्र की प्रसांगिकता स्वाभाविक ही है । कृष्ण चरित्र हमें जीवन के विविध पक्षों की समस्याओं का समाधान यथा महिला सशक्तिकरण, राष्ट्रीय एकता, दलित चेतना, पर्यावरण जागरूकता तथा विश्व शान्ति के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है । ऐतिहासिक महामानवों में जिनका व्यक्तित्व सबसे अधिक सम्पूर्ण है वह श्रीकृष्ण के जीवन में देखने को मिलता है । श्रीकृष्ण के जीवन को देखें तो वह प्रारम्भ से अंत तक उस कर्मयोग की एक अमर गाथा है, जिसकी व्याख्या स्वयं उन्होंने 'गीता' में की है । इसलिए जब–जब देश के भाग्याकाश पर विपदाओं के बादल आए तब–तब भारत के संतान ने श्रीकृष्ण को पुकारा, जब भी अधर्म और अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष का समय आया, देश की तरुणाई ने 'भागवतगीता' से प्रेरणा प्राप्त की और जीवन संघर्ष में अविचल डटे रहे ।

सन्दर्भ सूची :–

1. हिन्दी कविता के नायक – श्रीकृष्ण, डा. आनंद नारायण शर्मा,
   उद्धारित – धर्मायण, अंक 37, पृश्ठ 55, वर्ष अप्रैल–जून 1997 ईस्वी
   महावीर मंदिर प्रकाशन, पटना।
2. लीलापुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण, श्री गदाधर भट्ट,
   उद्धारित – कल्याण, वर्ष 82, सं0 8, पृ0 804, अगस्त 2008 ई0 गीता प्रेस, गोरखपुर।
3. श्रीकृष्ण से सम्बद्ध ऐतिहासिक स्थल, जनार्दन यादव,
   उद्धरित – धर्मायण, अंक 24, पृ0 57, वर्ष दिसम्बर 1994 ई0
   महावीर मंदिर प्रकाशन, पटना।
4. श्रीमद्भागवतगीता, भाई परमानंद, पृ0 23–39, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली। संस्करण 2004।
5. भागवत धर्म का उदय और गीता, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक,
   उद्धरित – धर्मायण, अंक 18, पृ0 46, वर्ष जून 1994 ई0
   महावीर मंदिर प्रकाशन, पटना।